ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-9* December-2021
Anthology : The Research

संगीत सौन्दर्य मे राग व रस का वैशिष्टय
Characteristic of Raga and Rasa in Musical Beauty

Paper Submission: 10/12/2021, Date of Acceptance: 21/12/2021, Date of Publication:23/12/2021

राधा रानी
असिस्टेंट प्रोफेसर,
संगीत गायन विभाग,
श0 मं0 पा0 राज0 महिला, स्ना0 महाविद्यालय,मेरठ,
उत्तर प्रदेश,भारत

सारांश

प्रत्येक राग का अपना एक मूल रस होता है तथा उस राग से उसी प्रकार के भाव और रस भी सम्बन्धित हो सकते हैं। अतः ऐसी अवस्था में विभिन्न रसों की निष्पत्ति होती है। जैसे कि राग मालकौंस। इसका मूल रस वीर है तो भी आलाप में शान्त व करूण रस की निष्पत्ति होगी। पर झाले में अद्भुत वीर रस निष्पादित होंगे, यह सभी तत्व रियाज व अभ्यास से ही सम्भव है।

Each raga has its own root rasa and similar bhavas and rasas can also be related to that raga. Therefore, in such a state, different rasas are produced. Like Raga Malkouns. Even if its original rasa is heroic, there will be a peaceful and compassionate rasa in the alap. But wonderful heroic rasa will be executed in the jhalla, all these elements are possible only through practice and practice.

मुख्यशब्दः रागदारी, रसिक तत्व, रागरंजकता, रस निष्पत्ति, रियाज, सौन्दर्यानुभुति, भावभिव्यक्ति, स्वर सन्निवेश, सतोगुण, तादात्मय।

Keywords - Ragdari, Rasik element, melody, rasa fulfillment, riyaz, beauty, feeling, expression, voice insertion, sato guna, identity.

प्रस्तावना

राग, भारतीय संगीत का प्रधान वैशिष्टय है। राग प्रधान होने के कारण ही भारतीय संगीत को 'रागदारी' संगीत भी कहा जाता है। संगीत शास्त्रों में राग की परिभाषा देते हुए कहा गया है। -

योयेध्वनि विशेषस्तु स्वर वर्ण विभूषित रंजको जन चिन्तानाम्। सः रागः कथ्यतेः बुधैः।

अर्थात ऐसी ध्वनि जो स्वर और वर्ण से विभूषित हो तथा मनुष्य के चित्त का रंजन करें उसे राग कहते हैं।

इस परिभाषा के अनुसार राग के स्वर, वर्ण तथा रंजक शक्ति का होना आवश्यक है, स्वर और वर्ग तो राग में है ही परन्तु रंजकता अधिक महत्वपूर्ण है राग की शास्त्रीय परिभाषा के अनुसार राग का रंजक होना आवश्यक है अनिवार्य नहीं। अतः रंजक न होने पर भी राग शास्त्रीय आधार पर प्रमाणित हो सकता है। परन्तु व्यवहारिक रूप से राग वह सही है जिसमें रंजकता हो। वैसे तो प्रत्येक स्वर स्वतः रंजन की शक्ति रखता है, अन्यथा वह स्वर नहीं, परन्तु यहॉ अभिप्राय स्वर-समुदायों से हैं। अकेला स्वर रंजक तो होता है पर उसमे चरित्र निर्माण करने की शक्ति नहीं होती, जबकि रंजक स्वर-समुदाय चरित्र निर्माण करता है और इसीलिए मानव हृदय की अंतर भावनाओं को अभिव्यक्त एवं स्पन्दित करने की क्षमता रखता है। राग का व्यक्तित्व उतना ही विस्मित है जितना किसी मनुष्य का। जैसे एक ही मनुष्य कभी गम्भीर, कभी चंचल प्रतीत होता है उसी प्रकार प्रत्येक रांग विभिन्न प्रकार के माध्यमों से अपना विभिन्न रूप प्रदर्शित करता है।

रस

भावों को अभिव्यक्त करने की चेष्टा प्राणिमात्र का स्वभाव है। भावाभिव्यक्ति के माध्यमों में से भाषा का स्वभाव व भाषा का मुख्य स्थान है। विभिन्न कलाओं के माध्यम से भी भावों की अभिव्यक्ति होती है। भावाभिव्यक्ति का ये बोध दूसरों तक पहुँचाने का माध्यम ही रस निष्पत्ति है। रस अंतः करण की निधि है। यह केवल एक अनुभव है आनन्द है। संगीत मे नाद से रस की निष्पत्ति होती है। रस एक चेतना है जो रजोगुण और तमोगुण के दूर हो जाने से होता है। ऐसी चेतना की अवस्था में मानव क्रोध, शोक आदि से मुक्ति पा लेता है।

स्वर

सन्निवेश भी रजोगुण और तमोगुण को दूर कर सतोगुण उभारने में समर्थ होते हैं अतः हर्ष आदि भावों को प्रकाशित करते हैं। रस ग्रहण करने के लिए कुछ तत्वों को होना आवश्यक है।
1- रसिक तत्व, 2- सहृदय 3- प्रतिभा, 4- वासना संस्कार 5- भावना चर्वणा 6- शारीरिक तथा मानसिक योग्यता, 7- तादात्म्य।
स्वर तथा गेय रचनाओं में भाव अभिव्यक्ति की शक्ति निहित है। उनसे ही रसों की निष्पत्ति होती है। ऐसे भाव स्थाई भाव, विभाव, अनुभाव के नाम से जाने जाते है। भाव तथा उनसे उत्पन्न रस इस प्रकार हैः-

रति	श्रंृगार
हास	हास्य

शोक	करूण
क्रोध	रौद्र
उत्साह	वीर
भय	भयानक
जुगुप्सा	वीभत्स
विस्मय	अद्भुत

रागों का निर्माण स्वरों से होता है। हर स्वर का अपना एक रस विशेष है।

षड़ज	वीर, अद्भुत, रोद्र
ऋषंभ	वीर, अद्भुत, रोद्र
गान्धार	करूण
मध्यम	श्रंृगार, हास्य
पंचम	श्रंृगार, हास्य
धैवत	वीभत्स, भयानक
निषाद	करूण
रे	करूण
ग	शान्त, वीर
ध	करूण
नि	शान्त, वीर

अतः जो स्वर विशेष के है, उस स्वर युक्त राग से वही रस निष्पादित होगा। इसी आधार पर हम कह सकते हैं कि प्रत्येक राग का अपना एक मूल रस होता है। जैसे-

हिंडोल	श्रंृगार
वराली	करूण
मालकोंस	वीर
दरबारी	गम्भीर
श्री	गम्भीर

भरत का रस सूत्र जिस प्रकार काव्य और नाट्य पर चरितार्थ होता है उस प्रकार संगीत में नहीं। संगीत प्रारम्भ से ही धार्मिक परिवेश में पला तथा बड़ा है और उसका लक्ष्य सदैव ही अध्यात्म की ओर रहा है जो कला अध्यात्म की ओर जाये, आत्म साक्षात्कार का माध्यम हो, उससे भयानक और वीभत्स जैसे रसों की निष्पत्ति की कल्पना न तो करनी चाहिए और न ही ये सम्भव दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त राग का मुर्तरूप न होना आदि अन्य कारणांे से भी सभी रस निष्पादित नहीं हो सकते।

परन्तु यह बात विचित्र सी लगती है कि राग को एक विशेष रस मानने पर भी लय, ताल, बंदिश आदि के परिवर्तन रस परिवर्तन सम्भव है। इससे ऐसा लगता है कि हम किसी राग को निश्चित रस से सम्बन्धित नहीं कर सकतें। इस सन्दर्भ में पं0 रविशंकर जी का कहना है कि प्रत्येक राग का अपना एक मूल रस होता है तथा उस राग से उसी प्रकार के भाव और रस भी सम्बन्धित हो सकते हैं। अतः ऐसी अवस्था में विभिन्न रसों की निष्पत्ति होती है। जैसे कि राग मालकौंस। इसका मूल रस वीर है तो भी आलाप में शान्त व करूण रस की निष्पत्ति होगी। पर झाले मंे अद्भुत वीर रस निष्पादित होंगे, यह सभी तत्व रियाज व अभ्यास से ही सम्भव है।

रागों से रसों की निष्पत्ति पर कई कारक प्रभाव

लय

जब कोई वादक, गायक, दो भिन्न रस युक्त राग, जैसे बिलावल तथा बागेश्री या भैरव तथा मियॉमल्हार को समान ताल, शैली से गाये, बजाये तो आलाप की धीमी गति में शान्त, करूण रस निष्पादित होंगे और झाले या तराने की दुत गति में रौद्र, अद्भुत रस उत्पन्न होंगे।

ताल

राग को किस ताल में गा बजा रहे है। यह बात भी रस निष्पादन में प्रमुख भूमिका निभाती हैं। उदाहरण के लिए:-

चौताल, सूलताल को गम्भीर, वीर रस की तालें माना गया है। कहरवा आदि श्रृंगार रस की तालें कही गयी है।

काव्य

एक ही राग को दो भिन्न-2 भावों वाली शब्द रचना में गाने पर, शब्दों के भावों का रस के ऊपर अधिक प्रभाव होगा। इसी प्रकार एक ही भाव वाली शब्द रचना को अलग-अलग रागों में गाने पर समान रस की उत्पत्ति होती है

वाद्य

आधुनिक समय मे प्रत्येक वाद्य की अपनी एवं स्वतन्त्र शैली तथा स्वतन्त्र रस है। राग को किस वाद्य पर बजाया जा रहा है। इसका प्रभाव भी राग से निष्पादित रस पर पड़ता है। जैसे सितार जल तरंग, आदि श्रंृगार रस के वाद्य माने गये है। सारंगी, वायलिन करूण रस के सरोद गम्भीर रस आदि। एक ही राग को अलग-अलग वाद्यों पर बजाने से अलग-2 रसों की उत्पत्ति होती है। गम्भीर प्रकृति के राग (दरबारी) आदि के लिए मोटी आवाज के बाहर सारंगी वीणा आदि सजीवता प्रदान करते हैं। चंचल प्रकृति के रागों (बहार, सारंग) आदि के लिए पतली आवाज के वाद्य- सितार, संतूर आदि अधिक उपयोगी हैं।

संगीतकार का व्यक्तित्व

यह सबसे महत्वपूर्ण तत्व है जो राग से रस निष्पादन का साधन है। संगीतकार के गुणों पर निर्भर करता है कि यह किस कुशलता से राग का अपना मूल रस उत्पन्न कर पाता हैं। व्यवहार में ऐसा पाया गया है कि एक ही राग भिन्न गायकों द्वारा गाये जाने पर, भिन्न रसों की निष्पत्ति हुई। यह संगीतकार की क्षमता योग्यता, अभ्यास, मनोवैज्ञानिक स्थिति आदि पर निर्भर करती है। संगीतकार की मनः स्थिति अगर उदास है या उत्तेजित है तो जो राग वह गाएगा या बजाएगा उसका गायन-वादन उस स्थिति से प्रभावित होगा।

श्रोता

वास्तव मे श्रोता ही वह तत्व है जो राग से निष्पादित रस को ग्रहण करता है। अतः श्रोता की शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक दशा पर ही सभी कुछ निर्भर है। अगर श्रोता एकाग्रता से राग सुनता है तो राग से उत्पन्न रस को वह ठीक ढंग से ग्रहण कर जाता है और आनन्द लेता है। परन्तु यदि उसका ध्यान कहीं और हो, मन कहीं और हो तो राग चाहे कितना भी अच्छा गाया, बजाया जा रहा हो, उसे वह वांछित आनन्द रस प्राप्त नहीं होगा।

वातावरण

वातावरण सबसे सशक्त तत्व है। यदि भौतिक वातावरण जैसे मौसम, स्थान आदि उपयुक्त है तो संगीतकार तथा श्रोता एकाग्रता से गायेंगे तथा श्रवण करेंगे और आनन्द प्राप्त करेंगे। परन्तु यदि वातावरण में कमी रह जाये।

उदाहरण के लिए:- संगीत प्रदर्शन किसी शान्त स्थान में हो रहा हो और ठीक ढंग से चल रहा हो तभी अचानक कोई घटना घट जाये, जैसे कोई विशालकाय सर्प आपके समक्ष आ जाये तो सारी एकाग्रता भंग हो जाएगी और रस की निष्पत्ति समाप्त हो जायेगी।

अध्ययन का उददेश्य

संगीत का मुख्य उददेश्य आनंद प्राप्ति है। संगीत द्वारा आनंद रस की निष्पत्ति के कारण होता है। संगीत रस निष्पत्ति करने का सबसे प्रभावशाली माध्यम है मानव जाति के अन्तः करण मे निवास करने वाली विशिष्ट भावनाओ के सतोगुण प्रधान परमोत्कर्षको ही शास्त्रज्ञों ने रस कहा है। तैतरीय उपनिषद में कहा गया है, "रसांे हृये वायं लब्ध्वाश नदी भवति"। कला का प्राण रस हैं और कला का लक्ष्य रसानुभूति अथवा जब कोई स्वाभाविक वस्तु थोड़ी सी परिवर्तित होकर मन के अन्दर एक साधारण नवीनता उत्पन्न कर देती है, तब उसे 'रस' कहते है।

निष्कर्ष

अतः निष्कर्षतः हमें यह ज्ञात होता है कि यदि संगीत में चाहे वह गायन वादन एवं नृत्य ही क्यों न हो इनको सौन्दर्य प्रधान बनाने के लिये इन सभी तत्वों को समाहित किये बिना एक सफल राग या गीत की कल्पना करना असम्भव है।

संदर्भ

1. *संगीत अंक - पं0 लक्ष्मी नारायण गर्ग*
2. *संगीत विशारद - वसंत*
3. *रागदारी संगीत - डॉ0 निधि जोशी पाठक*
4. *संगीत रस मंजरी - पं0 लक्ष्मण भटट तैलंग*
5. *संगीत प्रवाह - पं0 अवध किशोर पान्डे*
6. *कला एवं साहित्य - प्रवृत्ति और परम्परा- प्रो0 विश्वनाथ प्रसाद*